E-ISSN: 2706-8927
P-ISSN: 2706-8919
www.allstudyjournal.com
IJAAS 2021; 3(3): 313-316
Received: 02-05-2021
Accepted: 03-07-2021

डॉ0 विजय कुमार
प्राफेसर, आर. सी.एस. कॉलेज ल0 ना0 मि0 विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

Corresponding Author:
डॉ0 विजय कुमार
प्राफेसर, आर. सी.एस. कॉलेज ल0 ना0 मि0 विश्वविद्यालय, दरभंगा, बिहार, भारत

जायसीकृत बारहमासा का सौन्दर्य

डॉ0 विजय कुमार

सारांश
बारहमासा मौखिक परम्परा में लोक हृदय की श्रृंगारिक अभिव्यक्ति है जिसकी रागात्मकता से प्रभावित हो हिन्दी के आदिकालीन कवियों ने इसे एक साहित्यिक विधा के रूप में प्रतिष्ठित किया है। यह षट् ऋतु वर्णन की तरह ही होता है परन्तु प्रभावोत्पादकता में उससे बढ़कर होता है। जायसी से पूर्व ही लोकचित्त वृत्ति के पारखी कवि विद्यापति ने मैथिली में सुन्दर बारहमासा की रचना की[1] –

मास अषाढ़ उनत नव मेघ।
पिया विसलेख रहओं निरथेघा।।
कोन पुरूष सखि कोन से देस।
करब मायँ वहाँ जोगिनी भेस।।

पिद्यापति पदावली के उपरान्त 'बीसलदेव रासो', 'चन्दायन' तथा अन्य सूफी कव्यों में भी बारहमासा की योजना की गई है। परन्तु अभी भी इसकी गीतात्मकता और इसकी भाव–प्रवणता साहित्य की अपेक्षा लोककंठ के माध्यम से प्रकट होती है जिसका ऐतिहासिक स्रोत लोकभाषा है। भोजपुरी के शेक्सपीयर कहे जानेवाले कवि भिखारी ठाकुर का यह बारहमासा आज भी लोकप्रिय है :–

आवेला आसाढ़ मास, लागेला अधिक आस।
बरखा में पिया, रहितन पासवा बटोहिया।।

भोजपुरी में महेन्द्र मिश्र द्वारा लिखित बारहमासा लोकगायकों का कंठहार बन गया है। बिहार कोकिला–शारदा सिन्हा ने ''उधो, बारि रे बयस बीतल जाय हे कन्हैया के मनाय दिया ना'' गाकर बारहमासा के जादुई प्रभाव से, सबका मन मोह लिया है।
बारहमासा में साल के बारहो महीने की उद्दीपक प्रकृति, उसकी निष्ठुरता, उत्सव–त्योहार आदि का चित्रण करते हुए विरह–भाव की अभिव्यक्ति होता है और इसका आरंभ प्रायः आषाढ़ मास से होता है। आषाढ़ का आगमन जेठ की जलती धरती की प्यास बुझाने के लिए होता है और यह मास बीजवपन का उपयुक्त काल भी होता है। इसीलिए प्रोषित पतिका आषाढ़ की प्रतीक्षा बेसब्री से करती है, पति की राह हेरती कि वे आते ही होंगे, क्योंकि ऐसे समय में कोई अपनी वियोगिनी की उपेक्षा नहीं कर सकता। काले–काले मेघ यह मौन संदेश पहुँचा देते हैं कि उसके वियोग का अन्त होने ही वाला है। निश्चित रूप से आषाढ़ मास कामना को जागृत करने वाला होता है और इसीलिए जायसी ने 'पद्मावत' में 'नागमती वियोग खंड' के अन्तर्गत 'बारहमासा' का आरंभ आषाढ़ मास से किया है।

मुख्यशब्दः बारहमासा मौखिक, बीसलदेव रासो', ऐतिहासिक स्रोत

प्रस्तावना
भारतीय दाम्पत्य जीवन की पवित्रता, वियोग श्रृंगार की मार्मिकता, लोक संस्कृति तथा वर्णन शैली की दृष्टि से जायसी कृत 'बारहमासा' हिन्दी साहित्य में उत्कृष्ट स्थान रखता है। यह 'पद्मावत' का वह मार्मिक स्थल है जहाँ पहुँचकर सहृदय पाठक भाव में निमग्न होने के साथ–साथ अपनी लोक संस्कृति से साक्षात्कार कर अपने को धन्य पाता है। 'पद्मावत' का नायक त्तिरगढ़ का राजा रतनसेन सिंहल द्वीप की राजकुमारी पद्मावती के प्रेम में वशीभूत होकर अपनी विवाहिता पत्नी रानी नागमती को भूल जाते हैं। रानी नागमती अपने पति राजा रतनसेन की वियोगाग्नि में भींगी लकड़ी की भाँति न पूरी तरह जलती है न बुझती है, सिर्फ सुलगती है।
नागमती की इस दशा को देख उनकी सखियाँ प्रबोध रही हैं, यह कहकर कि महारानी धीरज रखिए, इस तपते मृगसिरा नक्षत्र के उपरान्त आर्द्रा आने ही वाला है, प्रकृति अगर तृप्त होने वाली है तो राजा भी आनेवाले हैं, इस महीने में वे आपकी उपेक्षा नहीं कर सकते –

पाट महादेइ ! हिये न हारू।
समुझि जीउ, चित चेतु संभारू।।

X X X X

मिलहिं ओ बिछुरे साजन, अंक भेंटि गहंत।
तपनि मृग सिरा जे सहै, ते अद्रा पलुहंत।।[2]

जायसी यदि बारहमासा को लोकजीवन से लिया तो लोकतत्त्व का ध्यान भी रखा है। वे जानते हैं कि जेठ का मृगसिरा नक्षत्र सबसे अधिक तपाता है, उसके अन्त का अर्थ आर्द्रा (आषाढ़) का आगमन है। जितनी तीव्र प्यास होगी संतृप्ति उतनी ही आत्मा को जुड़ाएगी। सखि के कहने का तात्पर्य यही है और तभी आषाढ़ आ धमकता है, पूरे लाव–लश्कर के साथ–

चढ़ा असाढ़ गगन घन गाजा।
साजा विरह दुंद दल बाजा।।

कुतबन कृत 'मृगावती' में भी अषाढ़ का वर्णन इसी प्रकार भव्य रूप में आया है –

गज्जत गंगन असाढ़ जनावा।
कुंजर जूह मेघ होई आवा।।

रानी को लगता है कि यह बूँदों की बौछार नहीं है, कामदेव के वाणों की वर्षा है। वह पुकार उठती है – 'प्रियतम, कामदेव ने मुझे चारो ओंर से घेर लिया है, बचाओ। आषाढ़ की इसी स्थिति का वर्णन मानस के किष्किन्धा कांड में हुआ है। गोस्वामी जी ने इसी तरह सीता हरण के उपरान्त श्री राम के मन की विरह दशा तथा प्रकृति का चित्रण नीति–कुशलता पूर्वक किया है।[3]

घन घमंड नभ गरजत घोरा।
प्रियाहीन डरपत मन मोरा।।
दामिनी दमक रही धन माही।
खल कै प्रीति जथा थिर नाही।।[3]

ऋतु–वर्णन का सौन्दर्य संयोग में निखरता है जबकि 'बारहमासा' का वियोग की स्थिति में। वियोग भाव ही 'बारहमासा' का प्राणतत्त्व है। जायसी कृत बारहमासा की मार्मिकता और मर्यादा नागमती के व्याहता होने के कारण कई गुणा बढ़ जाती है। अपने पति के प्रति निष्ठावान वियोगिनी नागमती एक आदर्श भारतीय नारी है। उसका प्रेम–विरह परकीया भाव का नहीं है और आचार्य शुक्ल ने इसीलिए कहा है– ''यह आशिक माशूकों का निर्लज्ज प्रलाप नहीं है, यह हिन्दू गृहिणी की विरह वाणी है। इसका सात्विक मर्यादा पूर्ण माधुर्य परम मनोहर है।''[4]
जायसी ने रानी नागमती की विरह जनित पीड़ा को उसी के द्वारा मुखरित किया है। एक विवाहित का यह कथन कितना मार्मिक है – 'जिनके घर पति हैं, वे सुखी हैं उन्हीं को गौरव और गर्व है। मेरा प्यारा कंत तो परदेश में है, इसीलिए मैं सब सुख भूल गयी हूँ :–

जिन्ह घर कन्ता ते सुखी, तिन्ह गारौं औ गर्व।
कंत प्यारा बाहिरै हम सुख भूला सर्व।।

सुख रानी–पद में कहाँ? सुख दाम्पत्य जीवन में है जिसके लिए नागमती तरस रही है। आषाढ़ ने उसके प्यास को शांत नहीं किया, सावन में धरती जलमग्न हो गयी। अब रानी की नाव डूबती नजर आती है और खेबनहार साथ नहीं है–

जग जल बूड़े जहाँ लागि ताकी।
मोरि नाव खेवक बिनू थाकी।।

भादव का महीना कदापि, प्रोषित पतिका के लिए सबसे पीड़ा दायक होता है। विद्यापति की नायिका भादव की प्राकृतिक छवि एवं वातावरण का वर्णन करते हुए प्रिय को इस तरह याद करती है।[4]

सखि हे, हमर दुखक नहिं ओर,
ई भर बादर माह भादर सून मंदिर मोर।

भादव की डरावनी अंधेरी रात का वर्णन मुल्ला दाउद के 'चन्दायन' तथा सूरदास के 'सूरसागर' में भी प्रभावशाली है। नागमती का मंदिर भी सूना है और सूनी सेज तो नागिन जैसी लगती है –

मंदिर सून पिउ अनतै बसा।
सेज नागिना फिरि–फिरि डसा।।

स्थिति ऐसी है कि जो वस्तुएँ सुखदायक लगती थी वही अब दुखदायक प्रतीत होती है। वह मानव और मानवेत्तर प्राणी, जड़ और चेतन के बीच भेद भूल गयी है और भौंरे–काग को अपना संदेश कहती है –

पिउ सों कहेउ संदेसड़ा, हे भौंरा! हे काग।
सो धनि बिरहे जरि मुई, तेहिक धुवाँ हम्ह लाग।।

यह वियोग की उच्चतर अवस्था है, जहाँ पहुँच सब प्राणियों से वियोगिणी अपना दुखड़ा सुनाती फिरती है। सीताहरण के उपरान्त श्री राम इसी तरह की वृक्ष–लताओं से सीता का पता पूछते फिरते हैं –

हे खग–मृग हे मधुकर श्रेनी।
तुम्ह देखी सीता मृग नैनी।।

वियोग में क्षीण होती जाती नायिका का वर्णन बिहारी ने भी किया है जो साँस लेने और छोड़ने पर भी एक कदम आगे–पीछे होती है, परन्तु वह प्रसंग मार्मिक नहीं हो पाता है। नागमती सिर्फ इतना कहती है कि कंत जब लौटेंगे तो सारस रूपी तन का केवल पंख देख पाएँगे। इसी में पाठक को नागमती की पीड़ा का एहसास हो जाता है – ''धनि सारस होई ररि मुई, पीऊ समेटहिं पंख।'' फिर भी समर्पण ऐसा कि फागुन में होलिका की तरह जलते अपने तन की क्षार को वह पति के कदमों बिछा देना चाहती है –

यह तन जारौं छार कै कहऊँ कि पवन उड़ाव।
मकु तेहि मारग उड़ि परै कंत धरै जहँ पाव।।

चैत्र में भी विरहिणी, 'नारि पराए हाथ है' कहकर अपनी विवशता व्यक्त करती है और बैशाख में उसके मानसर रूपी शरीर का प्राण रूपी कमल सूखता नजर आता है, इसीलिए कहती है–

''अबहुँ बेलि फिरि पलुहै, जौ पिऊ सींचै आइ।''[6]

जेठ आने पर वह बाबली हो पति की खोज में जंगल चली जाती है और पशु–पक्षी से बात करती है, परन्तु उसकी विरहाग्नि से पक्षी ही भस्म हो जाते हैं और इसलिए कोई पक्षी उसके पास आना नहीं चाहता। यही पर बारहमासा समाप्त होता है।
जायसी के बारहमासे में लोकतत्त्व, ग्राम्य परिवेश और प्रकृति की प्रधानता है।कवि ने वर्ष के बारह महीनों के साथ–साथ नक्षत्रों की प्राकृतिक स्थिति का वर्णन कर नागमती के विरह वर्णन को

विशिष्ट बना दिया है। आर्द्रा के संबंध में कवि कहते हैं – ''आर्द्रा लाग बीज भुईं लेई।'' आर्द्रा के आते ही कृषक भूमि में बीज बोने लगते हैं। यह दर्शाता है कि कवि को नागरीय जीवन का ही नहीं ग्राम्य जीवन का भी अनुभव था। आर्द्रा आषाढ़ के कृष्ण पक्ष में आता है अर्थात् आषाढ़ मास का आरंभ आर्द्रा नक्षत्र के साथ होता है। उत्तर भारत के कृषक जानते हैं कि आर्द्रा से ही वर्षा ऋतु का आरंभ होता है। इसलिए कृषक को इस नक्षत्र की प्रतीक्षा रहती है। कालिदास के 'मेघदूत' में यक्ष को आषाढ़ के प्रथम दिन बादल के दर्शन होते हैं। यक्ष कुमार संदेश कहने के क्रम में मेघ को यह कहना नहीं भूलता है कि खेती का फल तुम्हारे अधीन है – इस उमंग से ग्राम– बधूटियाँ भौंहें चलाने में भोले, पर प्रेम से गीले अपने नेत्रों में तुम्हें भर लेंगी –

त्वय्यायत्त कृषि फलमिति भ्रूविलासान भिज्ञै
प्रीति स्निग्धैर्जनपदवधूलोचनै : पीयमान : (श्लोक–16)

कवि ने 'पुख' नक्षत्र की भी चर्चा की है जो श्रावण मास के कृष्ण पक्ष में आता है। ग्रामीण क्षेत्र में इस नक्षत्र के संबंध में यह कथन प्रचलित है – पुख न राखे रूख। पुख नक्षत्र में लगातार वर्षा होती रहती है और ऐसी स्थिति में किसी के घर का छप्पर छाया नहीं गया है तो उसके घर का टपकना तय रहता है। अतः पुख नक्षत्र आने के पूर्व ही कृषक अपना छप्पर छा लेते हैं। 'पद्मावत' में जायसी ने विरहिणी नागमती को एक सामान्य कृषक वधू के रूप में चित्रित किया है, जो इस बात से चिन्तित है कि पुख नक्षत्र आने वाला है और उसका घर कौन छायेगा ? –

पुख नक्षत्र सिर ऊपर आवा।
हौं बिनु नॉह मंदिर को छावा।।

वस्तुतः पुराने समय में परदेशियों की इस मास में घर की चिन्ता स्वाभाविक रूप से हो आती थी। श्रावण आने पर 'मेघदूत' में यक्ष कुमार भी मेघ से कहता है – जब तुम आकाश में उमड़ते हुए उठोगे तो प्रवासी पथिकों की स्त्रियाँ मुँह पर लटकते हुए घुघराले बालों को ऊपर फेंककर इस आशा से तुम्हारी ओर टकटकी लगाएँगी कि अब प्रियतम अवश्य आते होंगे। तुम्हारे घुमड़ने पर कौन–सा जन विरह में व्याकुल अपनी पत्नी के प्रति उदासीन रह सकता है। जायसी ने 'पद्मावत' में 'पुख' नक्षत्र के प्रभाव के आलोक में नागमती के विरह का जो वर्णन किया है जिससे उसमें प्रभावात्मकता आ गयी है।

बारहमासा और उसके अन्तर्गत नक्षत्रों की स्थिति और प्रभाव का जो काव्यात्मक वर्णन 'पद्मावत' में किया है उससे पता चलता है कि कवि को भारतीय मौसम और जलवायु का कितना शान था। उन्होंने प्रकृति की छोटी–छोटी घटनाओं को संयोजित कर विरह को गंभीर और मार्मिक बना दिया है। एक स्थान पर ग्रीष्म में सूखे हुए तालाब का वर्णन करते हुए कहते हैं – गर्मी में सूखे हुए तालाब में जब दरार पड़ जाते हैं तो वर्षा के उपरान्त ही भरते हैं। इस प्राकृतिक घटना का उपयोग कवि ने नागमती के विरह वर्णन के लिए किया है –

सरवर दिया घटत नित जाई
टूक–टूक होई कै बिहराई।।
बिरहत दिया करहु पिय टेका।
दीठि दबंगरा मेखहु एका।।

कुआर अर्थात आश्विन में स्वाति नक्षत्र पड़ता है और इसी नक्षत्र चातकी की प्यास मेघ के बूँद से तृप्त हो जाती है और सीप भी मोतियों से भर जाता है– स्वाति बुंद चातिक मुख परे। सीप समुंद मौति लै भरे।। खंजन पक्षी के आने का यही समय होता है और कास के फूल भी कुआर में ही खिलते हैं –

सरवर सॅवरि हंस चलि आए।
सारस कुरू रहिं खंजन देखाए।।
भए अवगास कास बन फूले।
कंत न फिरे बिदेसहि भूले।।

बदलते हुए मास के साथ पशु–पक्षियों के किया–कलापों में परिवर्त्तन देखने को मिलता है। जायसी ने अपने बारहमासे में इसे भी कुशलता पूर्वक दर्शाया है, जैसे पूस मास में बिछूरे हुए चकई आपस में मिल जाते हैं, परन्तु कोकिला दिन रात विरह में जलती है – चकई निसि बुछुरे दिन मिला। हौं निसि बासर विरह कोकिला।'' इसी प्रकार कुआर मास के चित्रा नक्षत्र में कोकिला का बोलना बन्द होता है क्योंकि वह अपने प्रियतम को पा लेती है – चित्रा मित मीन घर आवा। कोकिल पीउ पुकारत पावा।।''

अपने बारहमासा को मार्मिक बनाने तथा विरह प्रभाव को गंभीरता प्रदान करते के लिए जायसी ने भारतीय पर्व त्योहारों का भी वर्णन किया है। कवि ने दीपावली त्योहार के उल्लसित वातावरण का वर्णन करते हुए नागमती के विरह को व्यंजित किया है – अबहूँ निठुर आब यही बारा। परब देवारी होइ संसारि।'' इसी प्रकार कवि ने होली के उल्लास को भी नहीं भूलाा है –

फागु करहि चाचरि जोरी।
हौं झुराव बिछुरी मोरी जोरी।।

जायसीकृत इस बारहमासे की सफलता उसके भाव और कला पक्ष दोनों पर आधृत है। प्रेम–परक साहित्य वस्तुतः भावनाओं का खेल है। भावनाओं को उछालकर पाठक के अन्तः स्थल में अपना स्थान बनाने में जायसी सफल हुए हैं। प्रेम एक ऐसी कोमल भावना है जो हरेक के दिलों पर राज करती है और यह लोक–परलोक दोनों को सुधारने वाला होता है। सूर ने इसीलिए कहा है –

प्रेम प्रेम ते होहि, प्रेम ते पारहि जइए।
प्रेम बाँध्यो संसार प्रेम परमारथ लहिए।।

इस प्रेम की अनुभूति वियोगावस्था में तीव्रतर होती है। इसीलिए कवि ने स्वयं कहा है –

प्रेमहि माहि बिरह रसरसा।
मैन के घर मधु अमृत बसा।।

नागमती के दाम्पत्य प्रेम की पराकाष्ठा दिखाने के लिए ही जायसी ने 'बिरह रसरसा' इस बारहमासे की रचना की है। इस रचना के भीतर कहीं भी अस्वभाविकता नहीं दिखती है। नागमती सूर की गोपियों की भाँति ''मधुबन तुम कत रहत हरे, विरह वियोग श्याम सुन्दर के ठाढ़े क्यों न जरै'' कहकर दूसरे प्राणी को उपालंभ नहीं देती है। वह केवल यह देखती है कि उसकी विरहाग्नि के कारण ही भौंरे और काग काले हो गये हैं। भौंरे और काग यदि राजा के पास संदेश पहुँचायेंगे तो उन्हें विश्वास होगा। वस्तुतः यह संदेश– ''पिउ सों कहेउ संदेसड़ा, हे भौंरा ! हे काग ! ..... तेहिक धुवाँ हम्ह लाग।'' हिन्दी विरह काव्य की चरमोपलब्धि है। जायसी के इस बारहमासा में ऐसे अनेक स्थल हैं तहाँ पाठक पढ़ते–पढ़ते ठहर जाते हैं और प्रेम–भाव–सागर में डुबकी लगाकर अपने को धन्य समझते हैं। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जैसे आलोचक ने इस बारहमासे की भावात्मकता से प्रभावित होकर कहा है, ''इसी नागमती के वियोग

वर्णन के अन्तर्गत वह प्रसिद्ध बारहमासा है, जिसमें वेदना का अत्यन्त निर्मल और कोमल स्वरूप, हिन्दू दाम्पत्य जीवन का अत्यन्त मर्मस्पर्शी माधुर्य अपने चारों ओर की प्राकृतिक वस्तुओं और व्यापारों के साथ विशुद्ध भारतीय हृदय की साहचर्य भावना तथा विषय के अनुसार भाषा का अत्यन्त स्निग्ध, सरल, मृदुल और कृत्रिम प्रवाह देखने के योग्य है।''[5]

जायसी ने केवल महीनों के आधार पर प्रकृति का चित्रण नहीं किया है। वे जानते थे कि मास के अन्तर्गत नक्षत्रों का क्या महत्त्व है। आर्द्रा, मृगसिरा, पुरवा, उत्तरा, हस्ति, स्वाति, चित्रा आदि नक्षत्रों के आधार पर प्रकृति चित्रण कर जायसी ने भारतीय ज्ञान तथा लोकतत्त्व को संरक्षित किया है। स्वाति–चातक, स्वाति–सीप के संबंध में जो भारतीय मिथक है उससे भी जायसी अवगत थे, यह इस बारहमासा से पता चलता है।

बारहमासा का आरंभ बड़ा ही भव्य है। 'चढ़ा असाढ़ गगन घन गाजा.....बाजा' से कविता का उठान होता है। 'गाजा' 'बाजा' का अन्त्यानुप्रास सचमुच में ''बाजा'' बजा देता है। 'धूम साम धौरे घन घाए' में अनुप्रास की सुन्दर योजना है। गुण की दृष्टि से आरंभ की चौपाई ओज गुण सम्पन्न है, शेष पदों में विरह के अनुकूल माधुर्य की प्रधानता है। रस की दृष्टि से यह श्रृंगार रस की श्रेष्ठ कृतियों में से एक है और हम कह सकते हैं कि बारहमासा को लोक जीवन से लेकर एक अभिजात्य साहित्यिक विधा के रूप में प्रतिष्ठित करने का श्रेय केवल जायसी को जाता है।

संदर्भ सूची

1. विद्यापति पदावली, संपादक– आचार्य श्री रामलोचन शरण, संकलन– श्री रामवृक्ष बेनीपुरी, प्रकाशक– पुस्तक भंडार पब्लिशिंग हाऊस, पटना–04, पद संख्या– 208
2. पद्मावत, मलिक मुहम्मद जायसी, व्याख्याकार– वासुदेव शरण अग्रवाल, प्रकाशक– साहित्य भवन, झाँसी, द्वितीय आवृत्ति–2018, पद संख्या– 343, पृष्ठ– 415–416
3. रामचरित मानस, किष्किन्धा काण्ड, चौपाई– 4.14, पृ0– 450, प्रकाशक– गीता प्रेस, गोरखपुर
4. त्रिवेणी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, मलिक मुहम्मद जायसी (निबंध), प्रकाशक– अनन्य प्रकाशन, दिल्ली–110032, संस्करण– 2021, पृ0– 34
5. त्रिवेणी, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, मलिक मुहम्मद जायसी (निबंध), पृष्ठ– 33, प्रकाशक– अनन्य प्रकाशन, संस्करण– 2021, दिल्ली– 32